Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 6 | ISSUE : 5 | MAY 2020

हिन्दी साहित्य में नारी का स्वरूप

सुश्री हेमलता [1]

[1] शोधार्थी हिन्दि विज्ञान, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान |

ABSTRACT:

KEYWORDS:

किसी भी युग में साहित्य सृजन नारी के विवरण बिना अपूर्ण ही नही, कदाचित असंभव ही है। मुगलकाल के अंतिम समय तक नारी अपनी शोचनीय अवस्था की पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी थी। रीतिकालीन कवियों ने ऐसी अश्लील और नग्न भावना प्रसारित की है कि हमें आज उन कवियों की कुत्सित भावनाओं पर दया आती है। नारी 'पूज्या' से 'भोग्या' बनकर रह गई। वह 'रानी' से नौकरानी बन कर रह गई।

आधुनिक युग का सही सही प्रारम्भ काल-बिन्दु निर्धारित करना कठिन है । यह सुनिश्चित है कि "आधुनिकता का प्रयोग बहुविध और अर्थ बहुत लचीला रहा है, किसी ने इसे एक रूप में तो दुसरे ने सर्वथा भिन्न अर्थ में ग्रहण किया ।"[1] आधुनिकता के बहुआयामी अर्थ और संदर्भों के कारण समाजशास्त्री भी इसको परिभाषित करना अत्यंत कठिन मानते है । "यद्यपि आधुनिकता की बहुत सारी प्रवृतियों के लिए हम पश्चिम के ऋणी है, किन्तु फिर भी इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भारत का पश्चिमीकरण ही आधुनिकता माना जाए |[2] डॉ पुष्पफल सिंह के अनुसार "आधुनिक" शब्द काल से जुड़ा है, इतिहास में इसे मध्य युग का क्लासिकल' युग से विच्छेद माना जा सकता है ।[3] प्रत्येक देश में आधुनिक युग का पर्दापण एक ही समय नही हुआ करता, भारत में आधुनिकता का अवतरण प्रायः 1857 ई. के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से माना जाता है । डॉ. नगेन्द्र के अनुसार "आधुनिकता मध्ययुगीन जीवन दर्शन से भिन्न एक नया जीवनदर्शन और दृष्टिकोण है ।"[4] आधुनिक युग मध्ययुगीन परम्परा से इतिहास का बोध का आश्रय लेकर सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन का दूत बनकर आया है। नारी भी समाज का आधा भाग है। और मध्ययुगीन नारियों की निम्नत्तर स्थिति का इतिहास बोध आधुनिक युग मार्गदर्शक बनकर भारतीय सामाजिक पटल पर उभरा है। आधुनिक युग के प्रारम्भ में रीतिकालीन काव्य परम्परा एकदम बंद नहीं हुई और देश के भिन्न-भिन्न भागों में स्त्रियों की दुर्दशा से व्यथित समाज सुधारकों ने अपने-अपने स्तर पर नारी सुधार के रचनात्मक कार्यक्रम हाथ में लिये। स्वामी विवेकानंद ने भारतीय नारी के सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया।[5] उन्होंने चुनौतिपूर्ण तरीके से आह्वान आन्हवान किया की स्त्री जाति की उन्नति हुए बिना देश तथा समाज की उन्नति असंभव है।"[6]

स्वामी विवेकानंद ने नारी स्वाधीनता में ही राष्ट्रीय स्वातंत्र्य निहित बताते हुए विचार रखा की स्त्री कि उन्नति के लिए सर्वप्रथम नारी की पराधीनता की बेडिया काटनी होगी, जो उनके ही विकास के लिए अनिवार्य है वरन् समस्त राष्ट्र के लिए परिहार्य है।[7]

भारतीय संस्कृति में परिवार को समाज की मूल इकाई माना गया है। परिवार ही मानव के भावों का प्राथमिक क्रीडास्थल है, जहाँ से वह अपना लौकिक जीवन आरम्भ करता है । परिवार के मूल आधार स्त्री पुरुष है।

हिंदी साहित्य के आदिकाल में वीररस एवं श्रृंगार रस मिश्रित रासो साहित्य में तो स्त्री के गौरव को थोड़ा बहुत बनाये रखा गया लेकिन मध्ययुग, मुगलकाल, रीतिकाल एवं भक्तिकाल में नारी की गारिमा में उत्तरोतर गिरावट के प्रकीर्ण उल्लेख पूर्व में ही किए गये हैं। आदिकाल में हिंदी साहित्य में कहीं-कही नारी के शौर्य एवं चातुर्य को सामाजिक हित में प्रस्तुत किया गया है। तथापि संस्कृत और हिंदी के प्रारम्भिक साहित्य अपने मूल चरित्र में स्त्री विरोधी रहे है।"[8]

डॉक्टर कमलानंद झा ने संस्कृत, हिंदी और मैथिली भाषा में लैंगिक पूर्वाग्रह की और संकेत करते हुए स्पष्ट किया है कि "इन भाषाओं में पुरुषार्थ शब्द का स्त्रीलिंग रूप नहीं मिलता है हालांकि वर्तमान काल के सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ विश्वनाथ त्रिपाठी ने पुरुषार्थ के लिए एक शब्द "स्त्रीयर्थ" प्रस्तावित किया है।"[9] आधुनिक काल से पहले हिंदी संस्कृत और मैथिली की लगभग सभी महत्वपूर्ण सूचनाएं रचनाएं पुरुष दर्प से दीपित है। इसमें स्त्री की उपस्थिति या तो 'भोग्या या 'देवी' के रूप में हुई है। सामान्य नारी में शक्ति संधान इन रचनाओं में कदाचित ही मिल पाए । लोकगाथाओं में स्त्रियों श्रम करती है, यही श्रम उन्हें शक्ति देता है। इसके विपरीत शिष्ट साहित्य के समाज की स्त्रिया आर्थिक रूप से पराश्रित होती है। उनका अस्तित्व 'देह' तक सीमित रहता है। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के कारण लोकगाथा की नायिकाएँ देह और देहरी तक सीमित नहीं रहती |"[10]

मध्ययुगीन संपूर्ण हिंदी साहित्य में स्त्री अस्मिता का ऐसा उदाहरण खोज पाना दुर्लभ है।"[11] हिंदी भाषा के महाकाव्य रामचरितमानस की सीता तथा मैथिली लोकगाथा लवहरी- कुशहरी की सीता की तुलना करने पर स्पष्ट होता है कि मैथिली लोकगाथा की सीता राम की छाया मात्र नहीं है "ये सीता सहस रावण के वध से लेकर पाताल प्रवेश तक राम-मुक्त, स्वयंप्रभ और स्वयंपूर्ण है। अपनी सुरक्षा वह स्वयं करती है, और इसके लिए उन्हें अयोध्या नाथ राम का न तो भरोसा है और न प्रयोजन |"[12] ध्यातव्य है कि कालांतर में आधुनिक हिंदी साहित्यकारों ने लोकगाथाओं में वर्णित स्त्री-विमर्श को समकालीन परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत कर नारी सुधार कार्यक्रमों मै अपनी प्रतिभा दिखाई है। "साकेत में गुप्तजी ने उर्मिला द्वारा कन्या विद्यालय खुलवाए सीता द्वारा आदिवासी बालाओं को शिक्षा दिलवाई है ।"[13]

जहाँ हिंदी साहित्य के आरंभ में दरबारी कवि अमीर खुसरो ने नारी सोवै सेज पैर" जैसी स्पष्ट उक्तियाँ कही ना साखी। साजना" जैसी मुरकियाँ भी कहीं और नारी के श्रृंगारपक्ष को हिंदी का रस पक्ष बनाने में परवर्ती रीति कवियों के लिए पथ प्रशस्त कर दिया। वहीं भक्ति कालीन हिंदी रचनाओं में कबीर सूर, तुलसी, मीरा एवं अन्य संतों ने नारी जीवन के उजले-कजले दोनों पक्षों पर अपने विचार रखे। कबीर की रचनाओं में जहां नारी को निन्दित किया गया है। वहीं पर आत्मा को प्रियतमा / प्रेमिका / विरहिणी मानकर परमात्मा रूपी प्रियतम / प्रेमी से मिलने का रूपक बारबार प्रस्तुत करके, यह स्थापित कर दिया कि लोकजीवन में नर-नारी एक ही सरिता के दो कूल हैं और साहित्य उनका समुचित विवरण प्रस्तुत किये बिना लोकोपकारी नहीं हो सकता है। कबीर ने भिन्न भिन्न दोहों, पर्दा, साखियों में दाम्पत्तय जीवन के वैविध्यपरक पक्षों का आश्रय लिया है। इसी प्रकार जिस विरह की अभिव्यक्ति के लिए दाऊद को मैना- मांजरी, कुतुबन को रुपमती, जायसी को नागमती और मंझन को मधुमालती की कल्पना करनी पड़ी उसी को कबीर ने उपास्य की विरहिणी बनकर बड़े मार्मिक ढंग से व्यक्त किया |"[14] अप्रत्यक्ष रूप से यह नारी जीवन का उज्जवल पक्ष भी है।

कबीर ने नारी के जननी रूप की प्रशंसा भी की है। वात्सल्य रस की व्यंजना करते हुए वह हरि को जननी मानना पसंद करते हैं :-

हरि जननी में बालक तोरा।

कोह न आगुण बकसह मोरा ||"[15]

इसी प्रकार कबीर ने सती पतिव्रता स्त्री की प्रशंसा भी की है।

"पतिव्रता मैली भली, काली कुचित कुरूप।

पतिव्रता के रूप पर, वारों कोटी सरूप ||"[16]

कबीर नारी के असत् रूप की निंदा करते हुए नारी के सत्-स्वरूप की प्रशंसा करते हैं। भक्तकालीन संतकाव्य रचनाओं में भी नारी का सत्-स्वरुप मिलता है। सूर के पदों में नारी-सौंदर्य का अद्भुत परिपाक होते हुए भी भौतिकतावादी दृष्टिकोण से नारी की गरिमा को ठेस नहीं पहुंचती है। तुलसी के काव्य में नारी जीवन के लौकिक पक्षों पर अधिक आदर्शवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। लेकिन दौर गंवार शूद्र पशु नारी इस उक्ति के कारण तुलसी स्त्री विरोधी प्रतीत होते हैं। मौरा के काव्य की आलोचना में विश्वनाथ त्रिपाठी ने यहां तक मत दिया है कि हिंदी ही नहीं, संसार में ऐसे कम कवि होंगे जो नारी को तुलसी से ज्यादा समझते है, जिन्हें जीवन का उनसे ज्यादा परिचय हो।[17] तुलसी के समान मीरा की कविता में भी ""दुर्जन" खल आते हैं। कबीर, तुलसी ने अपने समकालीन किसी को "खल" का नाम लेकर उल्लेख नहीं किया। मीरा ने राणा का नाम लिया है।"[18]

इस प्रकार नारी का नारी की दृष्टि से विवेचन मीरा के काव्य में ही मिलता है। सामाती युग में नारी को दैहिक पूजा की देवी मानने वाले कल्पना चित्रणों का बोलबाला हो चुका था।[19] सामान्ती व्यवस्था नारी को मुख्यतः शरीर ही समझती थी पृथ्वी और नारी दोनों भोग्या है। पृथ्वी माता है। उसका आदर्श है वीर भोग्या वसुंधरा। भक्ति सरिता में नारी कल्याण की लहरे उठती गिरती रहती है। मध्ययुगीन हिंदी भक्ति काव्य में सतो ने नारी के भौतिक शरीर आधारित स्वरुप की तीव्र निंदा की है।

"काम, क्रोध, लोभादि, मत प्रबल मोह के धारी।

तिन्ह ह अति दारून दुखद, माया रूपी नारी ||"[20]

"नारी धौरी अमल की अमली सब संसार।

कोई ऐसा सुकी ना मिला, जा संग उतरे पार ||"[21]

"सुकदेव कहियों सुनौ हौ राव, नारी नागिन शुभाव।

नागिन के काटे विष होई, नारी चितवन नर रहे मोह ||"[22]

इसी प्रकार सुन्दरदास ने नारी के शरीर को गतिरुपी कुंज, कटी रुपी केहरी, कटाक्ष रूपी बाण का संधान, कसे वाले काम रूपी चोर से युक्त जंगल की उपमा देकर नारी को रसातल में धकेल दिया।[23]

जहाँ संतो ने इस प्रकार नारी के भौतिक गौरव को धूलि धूसरित किया है। वस्तुतः गृहस्थ जीवन स्त्री-पुरुष के भौतिक संबंधों को नकार नहीं सकता है। इसलिए एक स्त्री के मातृत्व, पत्नीत्व या अन्य रिश्तों की लौकिक गरिमा को विशुद्ध रूप से पारलौकिक नारीत्व-भाव के रूप में निवहि कर पाना असंभव कृत्य सिद्ध हुआ और स्वयं इन्हीं संतों ने अपने काव्य में पतिव्रता नारी, माता, विमाता (धाय) सखि, परिणीता अथवा प्रणयोत्सुका कुमारीयों के रूप में नारी को प्रस्तुत करके जनमानस को दोहरे मानदंडों के बीच नारी को कर्तव्य विमूढ़ कर दिया। भक्तिकालीन हिंदी साहित्य की सभी काव्य धाराओं में नारी का चित्रण दो रूपों में हुआ है। सामान्य रूप से भक्तिकाल में नारी को अनादर की दृष्टि से देखा गया है। विशिष्ट रूप से नारी पतिव्रता-विरहिणी अथवा प्रतिबंधित उत्तरदायित्व निर्वाहिका है। कवियों की विशिष्ट नारी भावना उनकी सामान्य नारी भावना से भिन्न है।[24] नारी के सौंदर्य की प्रशंसा तो इस समाज का प्राण और इस संस्कृति का आधार था। यह विडंबना ही है कि कहीं पुरुष ने इस स्त्री को देवता की दासी बनाकर पवित्रता का स्वाग भरा कहीं मंदिर में नृत्य कराकर कला की दुहाई दी और कहीं अपने मनोविनोद की वस्तु बनाकर गुणग्राहकता दिखाई।[25]

बिहारी के दूहों में अग्निशिखा-सी ज्वलत रूप वाली नारी के आलिंगन से नर के हृदय को गुलाबजल की शीतलता अनुभव होने की व्यंजना की गई।

"ज्यों-ज्यों पावक लपट सी, पिय हिय सौ लपहासी।

त्यों-त्यों छुट्टी गुलाब सौं, उतिया अति सियराति ||"[26]

रीतिकवियों ने लौकिक प्रेम की साक्षात् मूर्ति के रूप में नारी का मांसल स्थूल देह चित्रण किया है। यह प्रेम सौंदर्य के आकर्षण से प्रस्फुलित होती है, विलास में परिपक्व होता है, और विरह में विलीन हो जाती है। प्रकारान्तर से हिंदी साहित्य में नारी यौवन के शोषित स्वरूप से पोषित रीतिकाव्य परंपरा के द्वारा रीतिकवियों ने साहित्यशास्त्र के सिद्धांतों की विवेचना के बहाने कामशास्त्र की सूक्ष्म व्याख्या की।[27] उन्होंने नारी को गृह की चारदीवारी से भी अधिक संकीर्ण के केलिगृह की सीमा में ही पर्यक पर संपीडिता करके छोड़ दिया। उसके बाहर नारी के कार्यक्षेत्र को महत्व देने का तो प्रश्न ही नहीं उठता है। मध्यकालीन हिंदी साहित्य में अन्यंत्र भी कहीं-कहीं स्पष्ट रूपेण नारी के प्रति सम्मानजनक सकारात्मक काव्यदृष्टि देखी जा सकती है। इसके साथ ही रीतिकाल के रीतिमुक्त कवियों की रचनाओं में भी नारी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोणयुक्त लोकजागरण के संकेत प्रकीर्णत: मिल जाते हैं।

वहीं भारतेन्दुयुग के कवियों ने सरल निज भाषा हिंदी में नारी जागरण हेतु रचनाएं लिखी। भारतेन्दु एवं द्विवेदीयुगीन नारी केवल मान या विरह की पुतली मात्र नहीं वरन राष्ट्र की कर्णधार और महत्वपूर्ण कार्यों में सक्रिय भाग लेने वाली कर्मठ नारी थी।

इस युग में काव्य नारी की जीवन परिधि, पति या परिवार तक सीमित नहीं रहकर राष्ट्र तक हो गई। जहाँ छायावादी कवियों ने नारी पर होने वाले समाजगत अत्याचारों के प्रति तीव्र स्वर मुखर नहीं करते हुए नारी के सुंदर रूप की ही प्रशस्ति लिखी, वहीं पर प्रगति वादियों ने नारी के सत्यम और शिवम् रूप को देखते हुए साम्यवादी देशों की सक्षम नारियों के समकक्ष भारतीय नारी को प्रतिष्ठापित करने के लिए कलम चलाई प्रगतिवाद की आदर्श प्रेमिका को प्रयोगवादियों ने यथार्थ के धरातल पर उतारा, लेकिन नारी की वासनात्मक प्रवृत्ति पर कोई भी आवरण डाले बिना साधारण नारी में भी सौन्दर्य का दर्शन पाया। आधुनिक काल में हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं में लेखकों द्वारा नारी के जीवन का यथार्थ प्रस्तुतीकरण करने वाली रचनाएँ लिखी गई है। रिपोर्ताज, संस्मरण और डायरी लेखन जैसी विधाओं में नारी दृष्टि का अभूतपूर्व परिचय देखा जा सकता है। इस प्रकार आधुनिक हिंदी काव्य में नारी के स्थान को लेकर बहुविध धारणाएँ प्रचलित है।

REFERENCES

1. डॉ. पुष्पपाल सिंह समकालीन कहानी नया परिप्रेक्ष्य पू. सं. 23-24

2. डॉ. निहाररंजक राय मार्डनिति एण्ड कांटेम्परी इण्डियन लिटरेचर पृ.सं. 5-6

3. डॉ. पुष्पपाल सिंह समकालीन कहानी नया परिप्रेक्ष्य पृ.सं. - 32

4. डॉ. नागेन्द्र नई समीक्षा नई सडभ पृ.सं. - 66

5. विवेकानन्द भारतीय नारी पृ.सं. - 49

6. चाँद मासिक 1925 पृ.सं. - 314

7. नौरा देसाई विमेन इन मॉडर्न इण्डिया पृ.सं. - 101 102

8. आलोचना अप्रैल-जून-2009 पृ.सं. -36

9. वहीं पृ.सं.- 36

10. वहीं पृ.सं. - 37

11. वहीं पृ.सं.- 38

12. लवहरी -कुशहरी स्वरुपओं में मौलिकता मनिपथम, मिथिला मिहिर 5 अगस्त 1973 पृ.सं.-199

13. साकेत, मैथलीशरण गुप्ता पृ.सं.- 34

14. राम किशोर शर्मा, कबीर ग्रंथावली सटीक पृ.सं.- 84

15. कबीर वचनावली पृ.सं.- 123

16. वहीं पृ.सं.- 123

17. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी मीरा का काव्य पृ.सं.- 45

18. वहीं पृ.सं.- 55

19. वहीं पृ.सं.- 62

20. रामचरित मानस, अरण्य काड दोहा सं. -43

21. मूलूकदास की बानी पृ.सं. - 02

22. सूरसागर खण्ड प्रथम नवम् स्कंध पृ.सं.- 180

23. सुन्दर पाठावली पृ.सं. - 45

24. डॉ मंजुलता तिवारी: मैथलीशरण गुप्त के काव्य में नारी, पृ.सं.- 16

25. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियों, पृ.सं.- 90

26. बिहारी रत्नाकर, पृ.सं.- 33

27. डॉ. मंजुलता तिवारी मैथलीशरण गुप्त के काव्य में नारी, पृ.सं.- 16